आदिवासी समस्याओं पर विमर्श-कुँड़ुख साहित्य के परिपेक्ष्य में

हेमन्त कुमार टोप्पो
शोधार्थी
जनजातीय एंव क्षेत्रीय भाषा विभाग
राँची विश्वविद्यालय, राँची

आदिवासी कहने से ही संघर्षशील व्यक्ति या समाज कठिनाइयों, समस्याओं से भरा जीवन, असम्य, अज्ञानी समाज का बोध होता है। आदिवासी से ही आदिवासियों के जीवन में समस्याएँ है, जो आज भी बदस्तुर जारी है। इनकी विशेष तरह की संस्कृति होती है। इनका भूभाग भी अलग होता है। इनके बीच पिछड़ापन, अशिक्षा, अज्ञानता, अंधविश्वास, रूढ़िवादी विचारधारा आदि होती है। इनका स्वाभाव भी थोड़ा संकुचित होता है। कुपोषण के शिकार, शोषित पीड़ित लोग इस समाज में आते है। इनकी संस्कृति संभ्रात श्रेणी की संस्कृति से बिल्कुल भिन्न होती है। इनकी संस्कृति प्रकृति के साथ जुड़ी होती है अर्थात् आदिवासियों का प्रकृति के साथ गहरा संबंध है। आदिवासियों की भाषा काफी समृद्ध है जो उनकी साहित्य में दिखलाई पड़ता है।

कोई भी भाषा संस्कृति की संवाहक होती है और साहित्य उसका सौन्दर्य शास्त्र होता है। आदिवासी साहित्य का उद्भव प्रकृति की गोद में हुआ है। नदी-नाले, पहाड़-पर्वत, झरने, प्राकृतिक वादियों से ही आदिवासी भाषा एवं संस्कृति पल्लवित, पुष्पित एवं सुभाषित है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में घटित होने वाले अच्छाई एवं बुराई सकारात्मक एवं नकारात्मक घटनाओं को लोगों के सामने प्रकट करने का काम साहित्य ही करता है। सभी तथ्यों को लोगों के सामने प्रकट कर समाज में बदलाव लाना समाज के हित के लिए कार्य करना सहित्य का उद्देश्य होता है।

आदिवासी समाज के विभिन्न समस्याओं एवं कठिनाइयों को कुँड़ुख (उरांव) साहित्य में जगह दिया गया है, उसका वर्णन हम यहाँ देखेंगे।

(1) शिक्षा की समस्या:-आदिवासी समाज में शिक्षा का अभाव देखा जाता है। सुदूरवर्ती इलाकों में या ग्रामीण क्षेत्र जहाँ सुविधा की कमी होती है वहाँ अधिकतर जनसंख्या निवास करती है। जहाँ शिक्षा या ज्ञान रूपी दीपक बहुत कम जलती है। आदिवासियों में पिछड़ेपन की सबसे बड़ी कारण शिक्षा की कमी ही है। आदिवासी समाज में पैसे का अभाव के कारण या खेती गृहस्थी का काम करने के कारण बच्चे स्कूल कॉलेज नहीं जाते हैं। मां-बाप में भी जागरूकता की कमी होती है जिससे बच्चों को शिक्षा के प्रति रूचि नहीं जगाया जाता है। आदिवासियों की एक और बड़ी समस्या है अपने पारंपरिक शिक्षण संस्थान धुमकुड़िया, गितिओड़ा, गितिओ, कोड़वाह आड़ा आदि संस्थानों का विघटन होना। आदिवासियों में इन संस्थाओं द्वारा आदिम तरीके से नृत्य, संगीत, ललितकला व्यक्तित्व निर्माण, सामाजिक-सांस्कृतिक शिक्षा, धार्मिक-शिक्षा, प्रेम-कथा तथा यौन-शिक्षा आदि का प्रशिक्षण बड़े बुजुर्गों की देख-रेख में दिया जाता था जो आज बहुत कम देखा जाता है। इसे लुप्त करने में ईसाई मिशनरी, आदिम-जाति सेवा मंडल, स्वयंसेवी-संस्थाएँ एवं अन्य गैर-आदिवासियों का रहा है। भले आज सरकार के द्वारा या सामाजिक संस्थाओं के द्वारा धुमकुड़िया भवनों का जीर्णोद्धार किया जा रहा है। एक और बड़ी बात है कि इनकी मातृभाषा में आरंभिक शिक्षा का न होना। हरेक आदिवासियों की अपनी मातृभाषा है। इनकी अपनी मातृभाषा की पढ़ाईका न होना इनकी शैक्षणिक समस्या को और अधिक बढ़ा रही है। इस तरह सबसे बड़ी समस्या के रूप में शिक्षा खड़ी हुई है। इस समस्या को जगह हमारे कुंड़ुख साहित्यमें भी जगह मिली है।

कुंड़ुख के कवि''दवले कुजूर अन्नेम'' के द्वारा एक कविता लिखी गई है जिसका शीर्षक है:-

''हायरे बेड़ा केरा''
खद्द परिया बेचना नु केरा
चेड़ा परिया हिहि कोकोति केरा
डिण्डा परिया पिंडा नु ओक्कनाति केरा
मेत परिया एड़पा फिकिरती केरा
पचगी परिया सोट्टा उदुरनुतिम केरा
''हायरे बेड़ा केरा''

व्याख्या:- ''हाय समय चला गया'' नामक हिन्दी अनुवाद शीर्षक में कहा गया है कि आदिवासी समाज शिक्षा के महत्व को नहीं समझा उसका समय देखते ही देखते चला गया। जैसे- बाल्यावस्था खेलते-खेलते बीत गया। किशोरावस्था हिहि-कोको अर्थात हंसते-खेलते बीत गया। अविवाहित या युवावस्था चैक-चैराहों में बैठने या अड्डाबाजी करने में बीत गया। विवाहित समय घर-गृहस्थी की चिंता में बीतगया तथा वृद्धावस्था में अपने स्वास्थ्य के प्रति व्यस्त रहने में बीत गया। इस प्रकार समय चला गया, हम इसके महत्व को नहीं समझ पाए। स्कूल-ककॉलेज जाने के महत्व को नहीं समझ पाए तथा समय बीतता गया।

''लूर गही महबा'' शीर्षक कहानी में शिक्षा के महत्व को दिखलाते हुए बीरेन्द्र उरांव ने लिखा है - एक माँ अपने बेटे के साथ घर में रहती है। माँ चटाई बुनाई करती है, उसी समय अपने छोटे से बेटे को परेशान देखकर उससे पूछती है - क्या हुआ आज तुम बहुत परेशान हो। बेटा बोलता है - मुझे धनवान व्यक्ति बनना है। माँ पूछती है - क्यों ? बेटा बोलता है - मुझे इज्जत और सम्मान चाहिए क्योंकि जिसके पास पैसा रहता है उसे सब कोई पूछता है। मां परेशान हो जाती है क्योंकि धन कमाने के लिए वह गलत रास्ता न अपना ले, तबवह सोचकर कहती है - दुनिया में एक ऐसा भी धन है जिसे कोई चोरी नहीं कर सकता है तथा उस धन को जितना बाटोगे उतना ही वह बढ़ेगा। बच्चा परेशान हो जाता है जैसे ही उसे पता चलता है कि शिक्षा या ज्ञान रूपी धन है जिसे जितना बांटोगे उतना बढ़ता है। वह समझ जाता है तथा स्कूल जाने लगता है और पढ़-लिखकर बड़ा आदमी वन जाता है। इस प्रकार कहानी के द्वारा समाज को शिक्षा के प्रति जागरूक करने का काम किया गया है।

(2) विस्थापन एवं पुनर्वास की समस्या:-

विकास के नाम पर औद्योगिक प्रगति, नगरीय विकास, सिंचाई के लिए बांध डैम निर्माण, खनिजों का उत्खनन व्यापक मात्रा में शुरू हुआ। इसका परिणाम हुआ लाखों लोगों का विस्थापित होना। इससे सबसे अधिक आदिवासी समाज ही प्रभावित होता रहा है। अभी कुछ योजनाएँ लंबित है। जैसे -

1.कोयलकारो परियोजनाएँ
2.नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज
3. ईचा डैम परियोजना।

इन सभी परियोजनाओं में आदिवासी समाज ही सबसे अधिक प्रभावित जनसंख्या में हैं। विभिन्न योजनाओं के पूरा हो जाने के कारण आदिवासी समाज विस्थापन का दंश झेल चुका है।

जैसे- एच.ई.सी. धुर्वा, बोकारो स्टील प्लांट, स्वर्णरेखा परियोजना तेनुघाट बांध, मैथन डैम, सी. सी. एल. इत्यादि परियोजना बन चुकी है किन्तु पुनर्वास की समस्या भी खड़ी हुई है। आज तक कोई अच्छी पुनर्वास नीति नहीं बनाई गई है। इन सबका पीड़ा साहित्य में परिलक्षित होता है।

''दव बिल्ली'' पुस्तक में वासन्ती कुमारी कुजूर के द्वारा ''खन्दरका कुड़खर'' शीर्षक कविता लिखी गई है जिसमें विस्थापन एवं पुनर्वास की समस्या के बारे कहा गया है।

नम्है छोटानागपुर नु ददही गही खाड़ बहई
मा ओना चिओर, ताम ओनोर
अइया इर बराबरी अम्म मेसनर की
अम्म गही खाड़ कमनर
अरा आ खाड़ नु नमन तुककर की
ताम ओना वेद्दनर।
अककुन कुड़खर मा निजड़ोर होले
आर मा बोंगोर नमन बांगतोओर
चोआ अककु चोआ ख्देरका कुड़खर
एजेराआ नीम निजड़ा चांड़े।।

व्याख्या:-

हमारे राज्य में दूध और मधु कर धारा है।
दूसरे लोग हमें पीने नहीं देगें, खुद पीयेंगे।
हमें पानी वाला दूध देंगे और असली दूध बेच देंगे
हमें अपने क्षेत्र से भगाकर भिखारी बना देंगे।
इसलिए आओ उठो और जागो विस्थापन रूपी समस्या से लड़ो।
ये कविता के माध्यम से कहा गया है।

(3) पलायन की समस्या:-

आदिवासी समाज कि एक बड़ी समस्या पलायन भी है। अपने गांव घर को छोड़कर दूसरे महानगरों या शहरों में जाकर काम करना तथा जीविकोपार्जन करना आदिवासी समाज में देखा जाता है। मानव तस्करी सम्बंधी समस्या के कई उदाहरण भी देखी जाती है। विशेषकर युवा समाज केरल, गोवा, दिल्ली, बम्बई, असम, भुटान आदि जगहों में चले जाते हैं। फिर किसी प्रकार अपने जीवन-यापन करते हैं। इसके लिए एक लोकगीत गायी जाती है। -

हायरे कुंड़खारो एका तरा कादर
एन्देरगे राजीन सुना नन्दर हो -2
कोहा कोहा परेता टुंगरी झरिया
निमन मेखा लगी मन्न मास करेगा
किर्रा बरा, किर्रा बरा हो भाई /बहिनरो

व्याख्या:-इस गीत के माध्यम से उन पलायन किए हुए लोगों के प्रति दुख प्रकट किया गया है तथा लौटने के लिए कहा गया है।-

ओहरे कुंडुख भाई-बहिन, कहाँ चले जा रहे हो, इतना सुन्दर राज्य को छोड़कर, बडा-बडा पहाड, नदी-नाला, सब पुकार रही है तुम्हं, लौट आओ, लौट आओ।

(4) मध्यपान या नशा-पान सम्बंधी समस्या:-कहा जाता है कि आदिवासियों में मद्यपान या नशा-पान धर्म एवं संस्कृति से जुड़ा हुआ है, इसलिए इस समाज में नशापान अधिक है लेकिन इस तरह सोचना और करना शायद गलत होगा। मद्यपानया शराब पीना इनका धार्मिक या सांस्कृतिक कृत्य नहीं है। लोक-कथा या लोक-गीत में सामाजिक कार्य या धार्मिक अनुष्ठानों में स्पष्ट रूप से तपान/तपावन चढ़ाने की परम्परा या प्रावधान है। तपान में शराब नहीं हड़िया होता है, जो चावल से बने तरल पदार्थ का पहला रस होता है। इसे धर्मेश या ईश्वर को अर्पित करने के बाद प्रसाद के रूप में सभी ग्रहण करते हैं। इसे पत्तल से बने दोना में एक ही बार लिया जाता है। इससे अधिक हड़िया पीना आदिवासी समाज में वर्जित है। कहा भी गया है लोकगीत के रूप में -

एक दोना में मैना जैसे बोलोगे
दो दोना में मेमना जैसे नाचोगे
तीन दोना में शेर जैसे दहाड़ोगे
चार दोना में सुअर जैसे लोटोगे।

इस प्रकार एक दोना अर्थात सीमित भर पीने की छूट है। किन्तु आज संस्कृति और धर्म का हवाला देकर दुरूपयोग किया जा रहा है।

डा. कैलाश उरांव के द्वारा लिखित एक कविता का शीर्षक ''मदगी रासी'' है, जिसमें महुआ का रस को व्यंग्य करते हुए कहा गया है।-

मदगी रासी खरा दव लग्गी
ओंद खेता नुम आलर गही नामे उठाबई
बग्गे मनी होले आलारिन धरई-पटकिई
मदगी रासी सवसे राजी नु बीड़रा
मदगी रासी नु सवसे राजी मुलुखिया
बेंजा पाही उरमी बेडा नु नामे अड़सिया
मदगी रासी खरा दव लग्गिया

व्याख्या:-महुआ रस बहुत अच्छा लगता है। एक दोना में ही व्यक्ति के नाम को उठाता है। अधिक होने पर पटक भी देता है। सभी जगह सभी कार्यक्रम में महुआ का रस चलता है, चाहे मेहमानी हो, शादी हो, कोई भी संस्कार हो महुआ रस का बहुत महत्व है।

''गोपाल उरांव'' कुड़ुख के शायर रहे हैं, उन्होंने नशापान को समाज का सबसे बड़ा बाधक मानते हुए ''खोर लड़ग'' पुस्तक में लिखा है-

अरखी झरा ओना-ओना लेपा मंजकय केरकय
अना हो मंगरा मण्डी ती बग्गे गिला मंजकय केरकय ।

व्याख्या:-हड़िया दारू पी पीकर मंगरा तुम बिलकुल कमजोर और बीमार हो गए हो, तुम तो भात से भी ज्यादा गीला हो गए हो। सामाजिक दायित्व से बिलकुल भाग गए हो। नशापान को सामाजिक बुराई के रूप में दिखलाया गया है। प्रसिद्ध नाटक ''अयंग जिया'' में लेखक ''पियुस लकड़ा'' ने एक परिवार को दिखलाया है। जहाँ पिता-लेड़गा नशापान में डूबा रहता है वहाँ घर की माँ अपने बच्चों के भविष्य को बनाने के लिए लगी रहती है। एक मां की नशापान के खिलाफ कार्य या आन्दोलन को नाटक में दिखलाया गया है।

(5) अधंविश्वास, जादूटोना सम्बंधी समस्या:-अधंविश्वास के प्रति आदिवासी समाज में बहुत अधिक रूझान देखा जाता है। लोग डायन-बिसाही भूत-प्रेत, अनचाही बाते आदि को अपने सामाजिक एवं धार्मिक रीतिरिवाज से जोड़ कर देखते हैं । डायन-प्रथा तो इतना खतरनाक है कि कभी-कभी हत्या तक करवा देता है। गाँव में कुछ घटना घटी या कोई बीमारी हुआ तो डायन या किसी भूत-प्रेत का काम है ऐसा माना जाता है। ईष्या, द्वेष, छल-प्रपंच भी आदिवासी समाज में अत्याधिक देखा जाता है, तो यह एक बड़ी समस्या के रूप में है। बिल्ली या सियार का रास्ता काटना, पक्षियों का रास्ते में मरा हुआ पाया जाना, रात में जानवरों का रोना ये सब अपशकुन माना जाता है।

कुंड़ुख उपन्यास ''नम्है एड़पा'' में जस्टिन कुमार एक्का ने एक ऐसे दृश्य को दिखाया है जिसमें अंधविश्वास सम्बंधी बातों को बताया गया है। ''सुरजो'' नामक मां एवं ''झुम्पा'' नामक पिता, बेटी सीता एवं सीता का छोटा भाई भी है। झुम्पा के द्वारा सुरजों एवं सीता का छोटा भाई को मार पीट किया जाता है। वे दोनां घायल हो जाते है। सुरजो को सीता अपने भाई को गांव के ही एक पदे लिखे व्यक्ति परतोस की सहायता से हास्पिटल ले जाते हैं। परिणाम यह होता है कि सुरजो की मृत्यु हो

जाती है। तथा सीता का भाई ठीक हो जाता है। इस प्रकार उपन्यास में अंधविश्वास को बुराई के रूप में दिखाया गया है। 'दव बिल्ली' कठिता पुस्तक में शीर्षक ''उज्जना डहरे'' में बसंती कुमारी कुजूर' ने कहा है।-

जइत पाइत अम्बा
भगत भूत अम्बा/वरा नाम होरमत ओन्टेम मनोत
तंलगर ती लड़ओत/रोगे दुकखे ती लड़ओत
गेचछा मनो नम्हय ससती

व्याख्या:-जात-पात का भेद-भाव छोड़कर, भगत, भूत-प्रेत को छोड़कर, आओ बुराई से लड़ोगे ग, रोग और दुख से लड़ेंगे। तभी हमारा दुख दूर होगा।(अप) भूमि हस्तातंरण की समस्या:-

आदिवासियों के सामने आदिकाल से ही जमीन बचाने की चुनौती रही है। कहा जाता है कि राजतंत्र की स्थापना होते ही आदिवासियों की भू-हस्तांतरण की प्रक्रिया की शुरूआत हो गयी थी। इस विचार को लिखने का कार्य डाल्टन हंटर गेटे तथा एस. सी. रॉय जैसे सम्मानीय विद्वानों ने इस लीक पर कलम चलाई है।

यह भी कहा जाता है कि मदरा मुण्डा के बाद प्रथम नागवंशी राजा फणिमुकुट राय से ही आदिवासियों की जनतांत्रिक व्यवस्था में बिखराव की शुरूआत हुई। जो भी हो परन्तु आदिवासियों का भूमि हस्तांतरण अर्थात् जमीन लूट एवं अवैध बिक्री का काम आज भी बदस्तुर जारी है और यह बड़ी समस्या के रूप में है। इसका चित्रण भी हमारे कुड़ुख साहित्य में दिखलाई पड़ता है। ब्छज्.।ब्ज्एवं ैच्ज्.।ब्ज्ए विल्किंसन रूलके बावजूद जमीन हस्तांतरण का कार्य धड़ल्ले से चल रहा है।

''डा. हरि उराँव'' के द्वारा लिखि गई कविता ''परिदका जातियर'' में भुमि हस्तांतरण की पीड़ा नजर आती है।

मलदव बेड़ा नम्हय उज्जनन
मड़ा बाचा आर ही खेक्खा नु
खुरजी रई आर गुसन/लूर हों बग्गेम रई
नम्हय बलना ती नमन बोका कमचर नम्हम बलनाति
तम्हय नलखन ननतआ हेल्लरर
कएनो अड्डा नु किन्दरआ हेललरर।।

व्याख्या:- हमारे जीवन में बहुत बुरा समय है। हमारा जमीन या धन सम्पत्ति दूसरों के कब्जे में है। उनके पास बुद्धि अधिक है। हमारी बेवकूफी के कारण हमारा सब कुछ छीन जा रहा है।

''होश ननना'' शीर्षक कविता में 'डा. नारायण भगत लिखते है।:-

नन्नारिन एरा तो बरचर इसन
नगपुरन बच्चर की उज्जागे कमचर टीशन
लोटा धरचर बरचर गमछा धरच बरचर इसन
नागपुरन बच्चागे तमन बअनर इमान।।

व्याख्या:-दूसरों को देखिए आए यहाँ उस समय उनके पास एक लौटा और एक गमछा था। यहाँ कमाते-खाते आज बड़ा-बड़ा घर एवं जमीन हो गया। हमारे नागपुर को लूट कर अपना जगह बना लिया गया। हमारी जमीन लुटी जा रही है।

(6) धर्मांतरण की समस्या:-आदिवासियों की भाषा, संस्कृति, धार्मिक विश्वास अपनी है। आदि धर्म या सरना धर्म के नाम से जिसे हम जानते है वही इनका मूल धर्म है। ईसाई, हिन्दु, इस्लाम, बौद्ध जैसे धर्मों में धर्मान्तरित होने से आदिवासी समाज में बड़ी समस्या खड़ी हो गई है। धर्मांतरण के कारण आदिवासी समाज की मूल छवि परिवर्तित होती गयी धर्म के साथ -साथ संस्कृति(रहन-सहन, वेश-भुषा, खान -पान, विवाह, जन्म आदि संस्कार) भी परिवर्तित हो रही है। ''खोर लड़ंग'' कविता पुस्तक में गोपाल उरांव'' ने ''तंगआ खोड़हा मझही'' शीर्षक कविता में लिखा है।:-अना कुड़ुख खोड़हा ता आल खद्धय

नीन एका डहरे नु कादय/निग्हैं डहरे कुड़ुख झण्डा हिके
कुड़ुख झण्डा गही किया चाला अड्डाहिके
नीनं एकसन उकका रअदय आ खेखेल निग्हें हिके
खेखेल ता मन्न - मास निग्है कुड़ुखझण्डा हिके।

व्याख्या:-इसमें आदिवासी समाज को अपने रास्ते से भटकने से रोकने की बात कही गई है। तुम कहाँ जा रहे हो अपने धर्म संस्कृति को त्यागकर कहाँ जा रहे हो? तुम्हारा यह धरती, पेड़-पौधे सब तुम्हे पुकार रहे हैं। ये पेड़ - पौधे तुम्हारा झण्डा है, जिसके नीचे तुम्हे बैठना है।

(7) वन दोहन की समस्या:-आदिवासियों का जीवन वन जंगल पहाड़ पर आश्रित होता है। अपने जरूरतों का समान जंगलों से ही प्राप्त करते हैं। कंद-मुल जलावन लकड़ी से लेककर शिकार खेलना जंगलों में ही करते हैं। सरकार के द्वारा अपने अधिकार में लेने के बाद आदिवासियों को काफी समास्या होने लगी बहुत सारे नियम बन गए जिसके कारण इनका वन जंगल से बाहर गांव में आना मजबूरी बन गया । जिसका असर इनकी जीविका पर पड़ने लगा इा प्रकार यह भी एक बड़ी समस्या के रूप में है।

डॉ. ''फ्रांसिस्का कुजूर'' ने अपनी कविता ''परता ओला लगी'में कहा है। ''जंगल जल रहा है। ''

अरगते मुलखते परता मइय्या बीड़ी ईशरिई पइरी पुटबीरी
चिच्च धी अंगोर लेखआ गोल गोल

अचका उन्दुल एथरा मानिम परता नु चिच्य/जिया चिहुकारा ओह एरर की परता नुचिच्च इस कविता में उन्होंने जंगल में आग लगने से जो नुकसान आदिवासी समाज को हो रहा है उसे बताया गया है। साथ ही जंगल कटने की बात भी उन्होंने कहा है जिससे हमें काफी नुकसान हो रहा है।

(8) गरीबी और बेरोजगारी की समस्या:-आदिवासी समाज में गरीबी, बेरोजगारी रूपी समस्या भी छायी हुई होती है। न्युनतम मजदूरी से कम आय का होना गरीबी होती है तथा योग्यता के अनुसार काम का नहीं मिलना बेरोजगारी होती है। यह आदिवासियों के बीच एक समस्या के रूप में व्याप्त है। जो साहित्य में भी नजर आता है।

''इन्द्रजीत उराव'' ने ''पुना खोर'' कविता पुस्तक में गरीबी का उल्लेख करते हुए

मेद्दो नु लूर मलला/कूल नू अन्न मल्ला/भईर पिटरी खद्दर /जिया नु धोख मल्ला ।।

व्याख्या:-बुद्धि की कमी है, पेट में अन्न-जल नहीं है। बच्चे एक चटाई लेटे हुए है। दिल में किसी प्रकार का कोई सोच नहीं है। सचमुच इस कविता में गरीबी और बेरोजगारी जो ज्ञान की कमी के कारण हुआ है उसे ही दर्शाया गया है। इस प्रकार आदिवासी समाज में सदियों से बहुत सारी समस्याएँ हैं जो कुड़ुख साहित्य ही नहीं बंल्कि लगभग सभी भाषाओं के साहित्य में परिलक्षित होता है।

****

संदर्भ-ग्रंथ

1. पुस्तक का नाम लेखक/कवि प्रकाशन वर्ष
2. मुन्ता पूंप झम्पा दवले कुजूर ''अन्नेम'' 1950
3. अयंग जियाँ पियुस लकड़ा 1986
4. पुना खोर इन्द्रजीत उराँव 1986
5. नम्है एड़पा जस्टिन कुमार एक्का 1987
6. दव बिल्ली बासन्ती कुमारी कुजूर 1988
7. कुड़ुख कत्थ खीरी विरेन्द्र उराँव 1990
8. कुड़ुख कत्थ सोर डा॰ कैलाश उराँव 1990
9. कत्थसोर डा॰ नारायण भगत 1990
10. खोर लड॰ग गेपाल उराँव 2008
11. उरांव भाषा एवं संस्कृति में संत जेवियर्स का॰लेज, महुआडाँड़2015
12. आधुनिकता का प्रभाव
13. चाइज्जका कत्थडण्डी डा॰ हरि उराँव 2018